मेसर्स नॉर्थर्न कोलफील्ड लिमिटेड

बनाम

हेवी इंजीनियरिंग कार्पोरेशन लिमिटेड और अन्य

(सिविल अपील संख्या 6296/2016)

13 जुलाई, 2016

[टी. एस. ठाकुर, सीजेआई और आर. भानुमति, जे.]

सरकारी निगमः सरकारी अनुबंध-सार्वजनिक क्षेत्र के उद्यमों के साथ-साथ सार्वजनिक क्षेत्र के उद्यमों और सरकारी विभागों के बीच वाणिज्यिक विमुकदमों का निवारण-विमुकदमों के निपटारे की प्रक्रिया-तत्काल मामले में, दो सरकारी स्वामित्व वाले निगमों के बीच विमुकदमा उत्पन्न हुआ-जिसे सरकार द्वारा स्थापित 'स्थायी आंतरिक-प्रशासनिक तंत्र' के संदर्भ में समाधान के लिए संदर्भित किया गया था-मध्यस्थ पुरस्कार-पुरस्कार से पीड़ित, अपीलकर्ता ने मुकदमा दायर किया-प्रतिमुकदमी ने दावा किया कि विमुकदमों को हल करने के लिए विशेष रूप से निर्धारित प्रक्रिया के अस्तित्व को देखते हुए मुकदमा प्रतिबंधित किया गया था और उक्त प्रक्रिया के आलोक में, विमुकदमा का कोई भी पक्ष विमुकदमा समिति (सीओडी) की अनुमति के बिना किसी भी अदालत में कार्यवाही का सहारा लेने का हकदार नहीं था-उच्च न्यायालय ने याचिका को स्वीकार करते हुए शिकायत को खारिज कर दिया प्रतिवादी का-अपील पर, अभिनिर्धारित किया गयाःओ. एन. जी. सी. के मामले में, यह अभिनिर्धारित किया गया था कि मुकदमे के साथ आगे बढ़ने के लिए सी. ओ. डी. की अनुमति आवश्यक थी-हालांकि, सी. ओ. डी. भंग हो गया था और सी. ओ. डी. के गठन का निर्देश देने वाले आदेशों को उलट दिया गया है और इसलिए, इस स्तर पर सी. ओ. डी. की मंजूरी की आवश्यकता पर जोर नहीं दिया जाना चाहिए-इसे देखते हुए, उसी से कोई मंजूरी प्राप्त

करने या उस पर जोर देने का कोई सवाल ही नहीं है-इसलिए, उच्च न्यायालय द्वारा मुकदमा को इस आधार पर खारिज करने के आदेश कि सी. ओ. डी. से अनुमति से पहले नहीं दी गई थी, अस्थिर है-अपीलकर्ता के इस तरह के निर्णय की मांग करने के अधिकार को केवल इसलिए अस्वीकार नहीं किया जा सकता है क्योंकि यह एक सरकारी स्वामित्व वाली कंपनी है, भले ही अपीलकर्ता एक सरकारी कंपनी हो, सरकार से अलग एक इकाई के रूप में इसका कानूनी चरित्र है-सिर्फ इसलिए

अपील को अनुमति देते हुए, न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया

1. सार्वजनिक क्षेत्र के उद्यमों के साथ-साथ सार्वजनिक क्षेत्र के उद्यमों और सरकारी विभागों के बीच वाणिज्यिक विवाद सामान्य रूप से सरकारी अधिकारियों या सार्वजनिक उद्यम ब्यूरो जैसी अधिकार प्राप्त सरकारी एजेंसियों के अच्छे कार्यालयों द्वारा मध्यस्थता द्वारा से निपटाए जाते थे।कानूनी मामलों के विभाग ने हालांकि इस विषय पर 8 मई, 1987 को एक ध्यान दें प्रस्तुत की, जिस पर सचिवों की एक समिति ने 26 जून, 1987 को आयोजित अपनी बैठक में विचार किया था।सचिवों की समिति ने सुझाव दिया कि पी. एस. ई. के बीच और पी. एस. ई. और सरकारी विभाग के बीच आयकर, सीमा शुल्क और उत्पाद शुल्क से संबंधित विवादों को छोड़कर सभी वाणिज्यिक विवादों को निपटाने के लिए सार्वजनिक उद्यम विभाग में मध्यस्थता के लिए एक स्थायी तंत्र स्थापित किया जाना चाहिए।समिति ने यह भी सुझाव दिया कि एक संविदात्मक खंड होना चाहिए जो वाणिज्यिक अनुबंधों के पक्षों को अपने सभी विवादों को मध्यस्थों की स्थायी मशीनरी को निपटाने के लिए संदर्भित करने के लिए बाध्य करता है। सचिवों की समिति ने प्रस्ताव दिया कि सार्वजनिक उद्यम ब्यूरो को इस संबंध में मंत्रिमंडल के विचार के लिए एक ध्यान दें लाना चाहिए कि कौन सा ध्यान दें तैयार किया गया था और मंत्रिमंडल को प्रस्तुत करने पर 24 फरवरी, 1989 को आयोजित अपनी बैठक में अनुमोदित, मंत्रिमंडल के निर्णय में परिकल्पना की गई है कि

सभी सार्वजनिक क्षेत्र के उद्यमों में मध्यस्थता की स्थायी मशीनरी का सहारा लेकर मध्यस्थता द्वारा विवादों के निपटारे के संबंध में अपने भविष्य और वर्तमान वाणिज्यिक अनुबंधों में एक संविदात्मक खंड शामिल किया जाए और प्रशासनिक मंत्रालय संघ के अनुच्छेदों के प्रासंगिक खंड के तहत सार्वजनिक क्षेत्र के उद्यमों को आवश्यक निर्देश जारी करेंगे।सार्वजनिक उद्यम ब्यूरो में मध्यस्थों की स्थायी मशीनरी द्वारा पालन किए जाने वाले निर्देशों और प्रक्रिया की रूपरेखा का मसौदा-तदनुसार डी. पी. ई. डी. ओ. संख्या 15 (9)/86-बी. पी. ई. (वित्त) दिनांक 29 मार्च, 1989 के संदर्भ में जारी किया गया था। इस प्रकार बनाए गए विवादों के निपटारे की प्रक्रिया हालांकि मध्यस्थता अधिनियम, 1940 के ढांचे के बाहर थी, जो तब लागू था। [पैरा 14] [78-जी-एच; 79-ए-ई]

2. अपीलकर्ता और प्रतिवादी के बीच विवादों को वर्ष की शुरुआत में मध्यस्थता के लिए स्थायी तंत्र के संदर्भ में निपटान के लिए भेजा गया था, उक्त संदर्भ की तारीख तक विवाद समिति पहले ही स्थापित की जा चुकी थी। एक संदर्भ के लिए अनुमति ली गई थी। कि मध्यस्थ ने मध्यस्थता की स्थायी मशीनरी के तहत एक निर्णय दिया, जिस पर कानून सचिव के समक्ष अपील में सवाल उठाया गया था, जिन्होंने उसी में कुछ बदलाव किए थे।इस प्रकार दिए गए पुरस्कार को अपीलकर्ताओं द्वारा स्वीकार नहीं किया गया था। अपीलकर्ता ने मध्यस्थता निर्णय को चुनौती देते हुए एक मुकदमा दायर किया जिसमें अपीलकर्ता ने एक घोषणा का दावा किया कि अनुबंधों को खंड 3 के भंग के कारण अमान्य कर दिया गया था। अपीलकर्ता ने यह घोषणा करने की भी मांग की कि प्रत्यर्थी कंपनी उक्त अनुबंध के तहत किसी भी राहत का दावा करने की हकदार नहीं थी और न ही प्रत्यर्थी संख्या 2 ऐसा करने का हकदार था और तथाकथित मध्यस्थता पुरस्कार को रिकॉर्ड के सामने दूषित कर दिया गया था, इसलिए इसे रद्द किया जा सकता है। यह कि इस तरह का मुकदमा दायर किया जा सकता है, लेकिन उस समय

तक आगे नहीं बढ़ाया जा सकता है जब तक कि सी. ओ. डी. ने अनुमति नहीं दी है, यह भी विमुकदमा से परे है क्योंकि मुकदमा शुरू होने की तारीख पर ओ. एन. जी. सी. मामलों के समूह में इस न्यायालय का निर्देश अभी भी क्षेत्र में था। ऐसी अनुमति 30 दिनों के भीतर प्राप्त की जा सकती थी जो पवित्र नहीं थी, लेकिन मुकदमे की संस्था को स्वयं दोष नहीं दिया जा सकता था क्योंकि एक वादकारी इस न्यायालय के निर्देश के संदर्भ में सीमा को बचाने के लिए कार्यवाही शुरू करने का हकदार था। फिर भी, उच्च न्यायालय ने इस आधार पर शिकायत को खारिज कर दिया है कि सीओडी से अनुमति प्राप्त नहीं की गई थी। ऐसा करते हुए उच्च न्यायालय ने स्पष्ट रूप से इस न्यायालय के निर्देश का अर्थ समझ लिया जैसे कि इस तरह की अनुमति की अनुपस्थिति में एक घातक दोष था जो वह नहीं था। सी. ओ. डी. से अनुमति प्राप्त होने तक मुकदमा में आगे की प्रगति को रोक दिया गया था। हालांकि, इस स्तर पर सीओडी की मंजूरी की आवश्यकता पर जोर नहीं दिया जाना चाहिए, क्योंकि सीओडी को निरस्त/भंग कर दिया गया है और ऐसी समिति के गठन का निर्देश देने वाले आदेशों को उलट दिया गया है। चूंकि वर्तमान में कोई सी. ओ. डी. नहीं है, इसलिए उसी से कोई मंजूरी प्राप्त करने या उस पर जोर देने का कोई सवाल ही नहीं है। इसलिए, उच्च न्यायालय द्वारा इस आधार पर वाद को खारिज करने के लिए पारित आदेश कि उससे पहले या सी. ओ. डी. से अनुमति के साथ नहीं था, अस्थिर है। [पैरा 23,24] [88-डी-एच; 89-ए-ई]

3. स्थायी मध्यस्थता तंत्र के तहत एक मध्यस्थता पुरस्कार विवाद को शांत कर सकता है यदि विवाद के पक्षों द्वारा इसे स्वीकार किया जाता है। हालाँकि, मामलों में, एक पक्ष पुरस्कार को प्रतिग्रहण करना नहीं करता है, जैसा कि मामले में स्थिति है, मध्यस्थ पुरस्कार विवाद को समाप्त नहीं कर सकता है। इस तरह का निर्णय मध्यस्थता को नियंत्रित करने वाले कानून के ढांचे के बाहर होने के कारण कानून की अदालत में कानूनी रूप से लागू नहीं होगा। [पैरा 25] [89-एफ-एच]

4. प्रशासनिक पक्ष से सरकार के लिए उपलब्ध उपचार उन उपचारों का स्थान नहीं ले सकते हैं जो देश के कानून के अनुसार हारने वाले पक्ष के लिए उपलब्ध हैं। अपीलकर्ता मध्यस्थता की स्थायी मशीनरी के संदर्भ में मध्यस्थों के समक्ष हार गया है और कई आधारों पर अपने दायित्व पर कड़ा विवाद कर रहा है। इसलिए अनुबंध के तहत अपीलकर्ता के दायित्व के बारे में विवाद तब तक बढ़ता रहता है जब तक कि इसे कानून के अनुसार अंततः और प्रभावी रूप से हल नहीं किया जाता है। कानून द्वारा मान्यता प्राप्त ऐसा कोई प्रभावी निर्णय अब तक नहीं हुआ है।ऐसा होने पर, इस तरह के निर्णय की मांग करने के अपीलकर्ता के अधिकार को केवल इसलिए अस्वीकार नहीं किया जा सकता है क्योंकि ऐसा होता है - सरकार के स्वामित्व वाली कंपनी भले ही अपीलकर्ता एक सरकारी कंपनी हो, लेकिन सरकार से अलग एक इकाई के रूप में इसका कानूनी चरित्र है। सिर्फ इसलिए कि उसने स्थायी प्रक्रिया का सहारा लिया था या कार्यवाही में भाग लिया था, कानून के अनुसार निवारण की मांग के खिलाफ कोई रोक नहीं हो सकती है। ठीक यही उसने किया जब उसने घोषणा के लिए एक मुकदमा दायर किया कि पुरस्कार विभिन्न कारणों से खराब था और यह भी कि प्रतिवादी द्वारा किए गए भंग के कारण अनुबंध रद्द कर दिया गया था।यह मामला दोनों निगमों के बीच सभी बकाया विमुकदमों के निर्णय के लिए एकमात्र मध्यस्थ के पास भेजा जाता है, विशेष रूप से इसलिए कि इस तरह के मध्यस्थता का विकल्प अपीलकर्ता द्वारा दीवानी अदालत के समक्ष दायर किए गए मुकदमे का एक लंबा खर्चीला और बोझिल परीक्षण है और एक गैर-सांविधिक प्रशासनिक तंत्र के तहत दिए गए निर्णय के निष्पादन में आने वाली कठिनाइयाँ हैं। [पैरा 25,27] [90-बी-ई; 91-ए-बी]

भारतीय इलेक्ट्रॉनिक्स निगम लि. वि.भारत संघ (2011) 3 एससीसी 404:2011 (2) एस. सी. आर. 971;, तेल और प्राकृतिक गैस आयोग केंद्रीय उत्पाद शुल्क कलेक्टर (2004) 6 एस. सी. सी. 437; ओ.

आई.] और प्राकृतिक गैस आयोग और ए. एन. आर. बनामकेंद्रीय उत्पाद शुल्क कलेक्टर 1995 सप्लीमेंट (4) एस. सी. सी. 541; तेल और प्राकृतिक गैस निगम लिमिटेड बनाम.शहर और उद्योग देव कॉर्प., महाराष्ट्र और अन्य। (2007) 7 एससीसी 39:2007 (8) एस. सी. आर. 429; आयकर आयुक्त, दिल्ली-VI बनाम ओरिएंटल इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड (2008) 9 एस. सी. सी. 349; केंद्रीय उत्पाद शुल्क आयुक्त बनाम भारत पेट्रोलियम कार्पोरेशन (2010) 13 एस. सी. सी. 42; भारतीय इलेक्ट्रॉनिक्स निगम लिमिटेड बनाम भारत संघ (2011) 3 एससीसी 404:2011 (2) एस. सी. आर. 971-संदर्भित।

मामला कानून संदर्भ

2011 (2) एस. सी. आर. 971	संदर्भित	पैरा 11
(2004) 6 एस. सी. सी. 437	संदर्भित	पैरा 11,16
1995 सपं. (4) एस. सी. सी. 541	संदर्भित	पैरा 15
2007 (8) एस. सी. आर. 429	संदर्भित	पैरा 17
(2008) 9 एस. सी. सी. 349	संदर्भित	पैरा 17
(2010) 13 एस. सी. सी. 42	संदर्भित	पैरा 18
2011 (2) एस. सी. आर. 971	संदर्भित	पैरा 19

सिविल अपीलीय न्यायनिर्णयः दीवानी याचिका सं 6296/2016

दिल्ली उच्च न्यायालय, नई दिल्ली के आर. एफ. ए. (ओ. एस.) सं. 50/2007 में में के दिनांक 07.08.2008 के निर्णय और आदेश से।

पी. एस. पटवालिया, ए. एस. जी., अनीप सचथे, सुश्री अंजलि चौहान, अधिवक्ता।

अपीलकर्ता के लिए।

रंजीत कुमार, एस. जी., बीनू टम्टा, ध्रुव टम्टा, सुश्री निकिता श्रीवास्तव, अधिवक्ता प्रतिवादीओं के लिए।

न्यायालय का निर्णय टीएस ठाकुर, सीजेआई द्वारा दिया गया था

1. अवकाश अनुदत्त गई।

2. यह एक और मामला है जो दो सरकारी स्वामित्व वाले निगमों के बीच विवादों को हल करने के मामले में एक दुखद स्थिति को सामने लाता है। आधिकारिक हलकों में यथार्थवाद के प्रति उदासीनता की पहेली में जो बात जोड़ती है वह यह है कि प्रत्यर्थी-निगम ने काफी दृढ़ता के साथ मध्यस्थता और सुलह अधिनियम, 1996 के संदर्भ में मध्यस्थता के लिए विवादों के संदर्भ द्वारा विवाद के त्वरित और प्रभावी समाधान और परिणामी शांति के उद्देश्य से इस कदम का विरोध किया है।

तथ्यः

3. अपीलकर्ता- नॉर्दर्न कोलफील्ड लिमिटेड ने मई, 1984 में बीना में एक कोल हैरिडलिंग प्लांट के निर्माण के लिए एक निविदा जारी की। निर्माण कार्य दो अनुबंधों के तहत किया जाना थाःअर्थात्। (1) कार्यों और सेवाओं के लिए एक अनुबंध और (2) उपकरण और पुर्जों के लिए एक अनुबंध ये दोनों अनुबंध प्रत्यर्थी-भारी ऊर्जा निगम लिमिटेड को दिए गए थे जो भारत सरकार की एक कंपनी भी है। अनुबंधों में एक खंड था जिसमें मध्यस्थता के माध्यम से पक्षों के बीच विवादों के निर्णय का प्रावधान था। वास्तव में दो अनुबंधों के संबंध में विवाद उत्पन्न होने के कारण, उन्हें सरकार द्वारा स्थापित "स्थायी आंतरिक प्रशासनिक तंत्र" के संदर्भ में समाधान के लिए भेजा गया था।दोनों निगमों द्वारा एक-दूसरे के खिलाफ दावे और जवाबी दावे किए गए थे, जो अंततः दोनों दिनांकित 28.02.1997 के दो पुरस्कारों के निर्माण में समाप्त हुए, जिसके

तहत प्रतिवादी संख्या 1 एक राशि Rs.16,87,61,981.11/- का हकदार था जबकि अपीलकर्ता को रू.56,05,000/- से सम्मानित किया गया था, दोनों पक्ष उन पुरस्कारों से असंतुष्ट थे जिन्हें उन्होंने सरकार द्वारा प्रदान किए गए आंतरिक तंत्र के संदर्भ में विधि सचिव, विधि कार्य विभाग, विधि और न्यायाधीश मंत्रालय के समक्ष दायर अपीलों में चुनौती दी थी।जबकि उपकरण की आपूर्ति के अनुबंध से संबंधित विधि सचिव के समक्ष अपील सं 67/1998 दायर की गई थी, अपील सं.64/1999 कार्यों और सेवाओं के निष्पादन के अनुबंध से संबंधित थी।

4. उपर्युक्त अपीलों विचाराधीनता रहने के दौरान प्रत्यर्थी संख्या 2-मेसर्स रामपुर इंजीनियरिंग कंपनी लिमिटेड ने दोनों निगमों के खिलाफ दिल्ली उच्च न्यायालय के समक्ष 1999 का मुकदमा दायर किया जिसमें उक्त प्रत्यर्थी ने प्रत्यर्थी संख्या 1 को अपीलकर्ता के साथ विवादों को निपटाने से रोकने के लिए निषेधाज्ञा का अनुरोध किया। अपीलार्थी का मामला यह है कि उसे अनुबंधों के निष्पादन में प्रतिमुकदमाी संख्या 2 की भूमिका के बारे में उक्त मुकदमा दायर करने के बाद ही पता चला, जिसमें एक अंतरिम आदेश द्वारा, उच्च न्यायालय ने पक्षकारों को अपील प्राधिकारी द्वारा दिए गए किसी भी निर्णय को लागू करने से रोक दिया। अपीलकर्ता का आगे का मामला यह है कि प्रत्यर्थी संख्या 1 ने, अपीलकर्ता के साथ निष्पादित अनुबंध की शर्तों के खंड 3 के विपरीत, प्रत्यर्थी संख्या 2 के पक्ष में अनुबंधों को पूर्व की पूर्व सहमति के बिना प्रस्तुत किया था और यह कि उक्त व्यवस्था का कोई कानूनी परिणाम नहीं था और न ही इसने अपीलकर्ता और उप-ठेकेदार के बीच कोई कानूनी संबंध बनाया था।

5. 1999 की अपील, जो कार्यों और सेवाओं के अनुबंध से उत्पन्न हुई थी, का पहले निपटारा किया गया, जिसमें अपीलीय प्राधिकरण उन्होंने 13.11.1999 पर एक पुरस्कार रू.15,84,50,000/- रुपये के अलावा दिया जिसमें कहा गया था कि अपीलकर्ता से ब्याज के रूप में 3.73 करोड़ रुपये की वसूली की जानी थी। प्रथम

प्रत्यर्थी द्वारा दायर की अपील सं.67/1998 का निपटान अपीलीय प्राधिकरण द्वारा 01.12.1999 पर किया गया था और मामले को पुनर्विचार के लिए मध्यस्थ को वापस भेज दिया गया था। मध्यस्थ और अपीलीय प्राधिकारी द्वारा दिए गए पुरस्कारों से व्यथित होकर, अपीलकर्ता ने दिल्ली उच्च न्यायालय के समक्ष दीवानी मुकदमा संख्या 1709/2000 दायर किया जिसमें उसने इस आशय की घोषणा का दावा किया कि प्रतिवादी संख्या 1 ने प्रतिवादी संख्या 2 को अनुबंध उप-पट्टा देकर दोनों निगमों के बीच निष्पादित अनुबंधों की शर्तों के खंड 3 का भंग किया था, जिससे अपीलकर्ताओं और पहले प्रतिवादी के बीच अनुबंध अमान्य हो गए। अपीलकर्ता ने आगे इस आशय की घोषणा के लिए अनुरोध किया कि प्रत्यर्थी संख्या 1 उन अनुबंधों के तहत किसी भी राहत का दावा करने का हकदार नहीं था और न ही प्रत्यर्थी संख्या 2 ऐसा करने का हकदार था। अपीलीय प्राधिकारी द्वारा पारित तथाकथित मध्यस्थ पुरस्कार अपीलकर्ता के अनुसार अवैध था और अभिलेख के सामने स्पष्ट त्रुटियों से दूषित था, इसलिए, अलग किया जा सकता है।

6. उच्च न्यायालय के विद्वान एकल न्यायाधीश ने मुकदमा में पारित एक अंतरिम आदेश द्वारा अपीलीय प्राधिकरण द्वारा पारित पुरस्कारों के कार्यान्वयन/निष्पादन पर रोक लगा दी।अपीलकर्ता का मामला यह है कि यह उस स्तर पर था जब प्रतिमुकदमी-प्रत्यर्थियों ने सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 (संक्षेप में, "सी. पी. सी".) के आदेश 7, नियम 11 (डी) के तहत एक आवेदन दायर किया था जिसमें अपीलकर्ता द्वारा दायर मुकदमे में मुकदमा की अस्वीकृति के लिए प्रार्थना की गई थी।प्रतिमुकदमी ने दावा किया कि दोनों सरकारी निगमों के बीच मध्यस्थता कार्यवाही में विमुकदमों को हल करने के लिए एक विशेष रूप से निर्धारित प्रक्रिया के अस्तित्व को देखते हुए मुकदमे को रोक दिया गया था।यह तर्क दिया गया कि उक्त प्रक्रिया के आलोक में, विवाद का कोई भी पक्ष विवाद समिति की अनुमति के बिना किसी भी न्यायालय में

कार्यवाही का सहारा लेने का हकदार नहीं था।

7. अपीलकर्ता ने अन्य बातों के साथ साथ साथ-साथ मुकदमा की अस्वीकृति के लिए प्रार्थना का इस आधार पर विरोध किया कि मुकदमा दायर करने या अन्य कार्यवाही करने के लिए किसी अनुमति की आवश्यकता नहीं थी क्योंकि विषय विमुकदमा में प्रतिमुकदमाी संख्या 2 भी शामिल था जो मध्यस्थता समझौते या कार्यवाही में पक्षकार नहीं था। 10.07.2007 दिनांकित एक आदेश द्वारा उच्च न्यायालय के एक विद्वान एकल न्यायाधीश ने प्रतिवादी-प्रत्यर्थियों द्वारा दायर आवेदन को स्वीकार कर लिया और अपीलकर्ता द्वारा दायर शिकायत को खारिज कर दिया।विद्वान एकल न्यायाधीश ने अभिनिर्धारित किया कि विशेष तंत्र के संदर्भ में संचालित कार्यवाही के अनुसार किए गए मध्यस्थता पुरस्कार को एक मुकदमा में अलग नहीं किया जा सकता है। विद्वत एकल न्यायाधीश ने यह भी अभिनिर्धारित किया कि अपीलकर्ता निगम और प्रतिमुकदमाी संख्या 2 के बीच अनुबंध की कोई गोपनीयता नहीं थी और दो सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रमों के बीच मुकदमा विमुकदमा समिति से मंजूरी के बिना दायर नहीं किया जा सकता था।

8. उच्च न्यायालय के एकल न्यायाधीश द्वारा पारित आदेश से व्यथित होकर, अपीलकर्ता ने दिल्ली उच्च न्यायालय की एक खण्ड पीठ के समक्ष आर. एफ. ए. (ओ. एस.) सं.50/2007 दायर किया। खण्ड पीठ ने दिनांक 07.08.2008 के एक आदेश द्वारा उक्त अपील को खारिज कर दिया है और विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा वाद की अस्वीकृति की पुष्टि मुख्य रूप से इस आधार पर की है कि चूंकि सरकारी निगमों के बीच विवादों के निर्णय के लिए सरकार द्वारा निर्धारित विशेष प्रक्रिया प्रभावी हो गई है और ओ. एन. जी. सी. के मामलों में इस न्यायालय के फैसलों के संदर्भ में पक्षों द्वारा इसका सहारा लिया गया है, इसलिए अपीलकर्ता को यह घोषणा करने का अधिकार नहीं था कि इस तरह से दिए गए पुरस्कार अवैध थे या उन्हें रद्द किया जा सकता है।

9. उच्च न्यायालय ने टिप्पणी कीः

"हमारे सामने, अपीलकर्ता, जो निश्चित रूप से एक सरकारी उपक्रम है, दावा कर रहा है कि पहला प्रतिवादी, जो एक सरकारी उपक्रम भी है, उनके बीच एक अनुबंध का उल्लंघन और उल्लंघन किया। विशेष रूप से, उक्त अनुबंध के खंड 3 का उल्लंघन किया गया है। प्रत्यर्थी संख्या 1, निश्चित रूप से कहता है कि ऐसा कोई भंग नहीं हुआ है। यह तब हैविवाद केवल इसलिए कि अपीलकर्ता को लगता है कि पहले प्रत्यर्थी द्वारा किए गए भंग से तीसरे पक्ष को लाभ हुआ है, इससे विवाद की प्रकृति अपीलकर्ता और प्रत्यर्थी सं. 1, के बीच होने से नहीं बदलेगी। अर्थात, दो संविदाकारी पक्ष। चूँकि ये दोनों सरकारी उपक्रम हैं, इसलिए सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रमों के बीच विवादों को हल करने के लिए प्रदान की गई स्थायी प्रणाली का पालन किया जाना चाहिए था।"

विमुकदमाति आदेश द्वारा, विद्वत एकल न्यायाधीश ने इस प्रश्न की जांच की है कि क्या अपीलकर्ता यह घोषणा करने का हकदार है कि अपीलकर्ता पुरस्कार अवैध हैं और मुकदमे के माध्यम से अलग किए जाने के लिए उत्तरदायी हैं या क्या वे किसी कानून द्वारा वर्जित हैं। विद्वान एकल न्यायाधीश ने अभिनिर्धारित किया है कि मध्यस्थता पुरस्कार को किसी मुकदमा में अलग नहीं किया जा सकता है। यह भी अभिनिर्धारित किया गया कि एक मध्यस्थता पुरस्कार को एक मुकदमा में अलग नहीं रखा जा सकता है। यह भी अभिनिर्धारित किया गया कि एक बार जब पक्षकार सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रमों के बीच विमुकदमा के निवारण के लिए खुद को स्थायी तंत्र के अधीन कर लेते हैं, तो उसमें निर्धारित तंत्र का पालन किया जाना चाहिए और इसलिए, विमुकदमा समिति की मंजूरी के बिना विचाराधीन मुकदमा दायर नहीं किया जा सकता था। केवल अपीलकर्ता के इस तर्क को ध्यान में रखते हुए कि विवाद की जड़

की शर्तों के खंड 3 का उल्लंघन है अनुबंधों में, यह नहीं कहा जा सकता है कि विद्वान एकल न्यायाधीश ने तथ्यों के विवादित प्रश्न का निर्णय लिया है। इसने केवल अपीलार्थी के अपने मामले पर ध्यान दें है जिसमें कहा गया है कि प्रमुख खिलाड़ी दो सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रमों हैं जिन्होंने संबंधित अनुबंध में प्रवेश किया है। एक-दूसरे के लिए, और इसलिए, ऐसे विवादों के लिए निर्धारित विशेष प्रक्रिया का पालन किया जाना चाहिए था। नतीजतन, विद्वान एकल न्यायाधीश ने उचित रूप से अभिनिर्धारित किया कि वाद खारिज होने योग्य था, अन्य बातों के साथ साथ साथ, उस कारण से।

10. वर्तमान अपील उपरोक्त निर्णयों और आदेशों की शुद्धता पर सवाल उठाती है।

11. अपीलकर्ता की ओर से पेश हुए श्री पी. एस. पटवालिया, विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता तर्क दिया कि उच्च न्यायालय द्वारा लिया गया दृष्टिकोण कानूनी रूप से अस्थिर था।यह प्रस्तुत किया गया कि उच्च न्यायालय इस धारणा पर आगे बढ़ा है जैसे कि सरकार द्वारा निर्धारित विशेष प्रक्रिया के तहत मध्यस्थ द्वारा दिया गया पुरस्कार मध्यस्थता अधिनियम, 1940 या मध्यस्थता और सुलह अधिनियम, 1966 की समझ के भीतर एक मध्यस्थता पुरस्कार है। उन्होंने आग्रह किया कि उच्च न्यायालय ने प्रशासनिक व्यवस्था की उत्पत्ति की अनदेखी की है, क्योंकि सरकारी निगमों के बीच विवादों के समाधान के लिए विशेष प्रक्रिया की स्थापना के पीछे का उद्देश्य पुराने या नए मध्यस्थता अधिनियम द्वारा मान्यता प्राप्त तंत्र को निर्धारित करना नहीं था और न ही विशेष प्रक्रिया उक्त दो अधिनियमों के तहत उचित निर्णय के लिए एक विकल्प के रूप में थी ।यह तर्क दिया गया था कि विशेष प्रक्रिया के तहत मध्यस्थ ने यह निर्धारित किया था कि अपीलकर्ता कंपनी के पूर्वाग्रह के लिए उसे संदर्भित किया गया मुद्दा, बाद वाले के लिए एक उचित नागरिक कार्रवाई में निर्णय पर हमला करने के लिए खुला था, जो कार्रवाई किसी भी कानून द्वारा वर्जित नहीं थी और न ही उसे केवल

इसलिए खारिज किया जा सकता था क्योंकि संघर्ष के संभावित सौहार्दपूर्ण समाधान के लिए विशुद्ध रूप से प्रशासनिक प्रक्रिया को कानून की मंजूरी के बिना अपनाया गया था। यह आग्रह किया गया कि ओ. एन. जी. सी. मामलों में इस न्यायालय के निर्णयों के तहत प्रदान किया गया तंत्र किसी भी मामले में ऐसा नहीं था जिसे इस न्यायालय की संविधान पीठ ने इलेक्ट्रॉनिक्स कॉर्पोरेशन ऑफ इंडिया लिमिटेड बनाम ओ. एन. जी. सी.भारत संघ, (2011) 3 एस. सी. सी. 404 मामले में रद्द कर दिया था। श्री पटवालिया ने तेल और प्राकृतिक गैस आयोग बनाम केंद्रीय उत्पाद शुल्क कलेक्टर (2004) 6 एस. सी. सी. 437 मामले में इस अदालत के फैसले पर भी रिलायंस को यह आग्रह करने के लिए रखा था कि विमुकदमा के पक्षों द्वारा दायर और प्रशासनिक तंत्र द्वारा कवर किए गए किसी भी मुकदमे को असमर्थनीय के रूप में खारिज नहीं किया जा सकता है। बस इतना ही किया जा सकता था कि अभियोक्ता को विवाद समिति से अनुमति प्राप्त करने का अवसर दिया जाए ताकि वह आगे बढ़ सके।

12. प्रत्यर्थी की ओर से, श्री रंजीत कुमार, विद्वान सॉलिसिटर जनरल ने जोरदार तर्क दिया कि उच्च न्यायालय वाद को अस्वीकार करने में उचित था क्योंकि विवादों के निर्णय के लिए एक विशेष तंत्र प्रदान करने का उद्देश्य ही विफल हो जाएगा यदि ऐसे किसी भी निर्णय पर किसी भी दीवानी कार्रवाई में सवाल उठाया जा सकता है जैसा कि अपीलार्थी द्वारा किया जाना चाहा गया था। श्री कुमार ने तर्क दिया कि विशेष तंत्र के तहत मध्यस्थ द्वारा संचालित मध्यस्थता कार्यवाही दोनों अधिनियमों के वैधानिक ढांचे के बाहर हो सकती है, फिर भी निर्णय की प्रभावकारिता पर संदेह नहीं किया जा सकता है। उन्होंने आग्रह किया कि यहाँ तक कि जब विशेष तंत्र के तहत मध्यस्थ द्वारा निर्णय किसी न्यायालय में लागू करने योग्य डिक्री के समान नहीं था, तो यह तथ्य कि दोनों निगम सरकार के स्वामित्व में थे, एक-दूसरे को देय राशि की वसूली को सुविधाजनक बनाने के लिए पर्याप्त था और इस तरह प्रशासनिक कार्रवाई के

माध्यम से पुरस्कार के निष्पादन को प्रभावी बनाता है।

13. हमने बार में की गई दलीलों पर अपनी उत्सुकता से विचार किया है। इससे पहले कि हम बार में आग्रह किए गए विवादों से निपटें, हमें उस ऐतिहासिक पृष्ठभूमि में प्रचार करने की आवश्यकता है जिसमें सरकार द्वारा विशेष तंत्र निर्धारित किया गया था।

14. सार्वजनिक क्षेत्र के उद्यमों के साथ-साथ सार्वजनिक क्षेत्र के उद्यमों और सरकारी विभागों के बीच वाणिज्यिक विवाद सामान्य रूप से सरकारी अधिकारियों या सार्वजनिक उद्यम ब्यूरो जैसी अधिकार प्राप्त सरकारी एजेंसियों के अच्छे कार्यालयों द्वारा मध्यस्थता द्वारा से निपटाए जाते थे।कानूनी मामलों के विभाग ने हालांकि इस विषय पर 8 मई, 1987 को एक ध्यान दें प्रस्तुत किया, जिस पर 26 जून, 1987 को आयोजित सचिवों की समिति की बैठक में विचार किया गया था। सचिवों की समिति ने सुझाव दिया कि पी. एस. ई. के बीच और पी. एस. ई. और सरकारी विभाग के बीच आयकर, सीमा शुल्क और उत्पाद शुल्क से संबंधित विवादों को छोड़कर सभी वाणिज्यिक विवादों को निपटाने के लिए सार्वजनिक उद्यम विभाग में मध्यस्थता के लिए एक स्थायी तंत्र स्थापित किया जाना चाहिए। समिति ने यह भी सुझाव दिया कि एक संविदात्मक खंड होना चाहिए जो वाणिज्यिक अनुबंधों के पक्षों को अपने सभी विवादों को मध्यस्थों की स्थायी मशीनरी को निपटाने के लिए संदर्भित करने के लिए बाध्य करता है। सचिवों की समिति ने प्रस्ताव दिया कि सार्वजनिक उद्यम ब्यूरो को इस संबंध में मंत्रिमंडल के विचार के लिए एक ध्यान दें लाना चाहिए, जिसे तैयार किया गया था और 24 फरवरी, 1989 को हुई मंत्रिमंडल की बैठक में इसे मंजूरी दी गई थी। मंत्रिमंडल के निर्णय में परिकल्पना की गई है कि सभी सार्वजनिक क्षेत्र के उद्यम अपने भविष्य और वर्तमान वाणिज्यिक अनुबंधों में मध्यस्थता की स्थायी मशीनरी का सहारा लेकर मध्यस्थता द्वारा विवादों के निपटारे के संबंध में एक संविदात्मक खंड शामिल

करेंगे और प्रशासनिक मंत्रालय संघ के अनुच्छेदों के प्रासंगिक खंड के तहत सार्वजनिक क्षेत्र के उद्यमों को आवश्यक निर्देश जारी करेंगे। पालन किए जाने वाले निर्देशों और प्रक्रिया की रूपरेखा का मसौदा सार्वजनिक उद्यम ब्यूरो में मध्यस्थता की स्थायी मशीनरी द्वारा तदनुसार डी. पी. ई. डी. ओ. सं. 15 (9)/86-बी. पी. ई. (वित्त) दिनांक 29 प्रतिशत मार्च, 1989 के संदर्भ में जारी किया गया था।यह प्रक्रिया की प्रारूप रूपरेखा के पैरा 2 से स्पष्ट है जो निम्नानुसार हैः

> "2. मध्यस्थता अधिनियम, 1940 (1940 का 10) इस खंड के तहत मध्यस्थता पर लागू नहीं होगा। एकमात्र मध्यस्थ का निर्णय विवाद के पक्षकारों के लिए बाध्यकारी होगा। बशर्ते कि इस तरह के पुरस्कार से व्यथित कोई भी पक्ष पुरस्कार को अलग करने या संशोधित करने के लिए कानून सचिव, कानूनी कार्य विभाग, कानून और न्यायाधीश मंत्रालय, भारत सरकार को आगे का संदर्भ दे सकता है। इस तरह के आगे के संदर्भ पर, विवाद का निर्णय कानून सचिव या विशेष सचिव/अतिरिक्त सचिव द्वारा किया जाएगा, जब कानून सचिव द्वारा अधिकृत किया जाएगा, जिसका निर्णय अंततः और निर्णायक रूप से पक्षों को बाध्य करेगा।"

15. जबकि उपरोक्त आदेश के संदर्भ में मध्यस्थता की स्थायी मशीनरी स्थापित की गई थी और सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रमों और सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रमों को उक्त प्रक्रिया का सहारा लेने के निर्देश भी लागू रहे, सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रमों द्वारा उन निर्देशों का पालन करने के बजाय कानूनी कार्यवाही का सहारा लेने के उदाहरण इस न्यायालय के संज्ञान में आए। और प्राकृतिक गैस आयोग और अपर 5, केंद्रीय उत्पाद शुल्क 1995 के कलेक्टर, उप (4) एस. सी. सी. 541, जिसमें इस न्यायालय ने काफी सार्वजनिक खर्च पर ऐसी कानूनी कार्यवाही पर ध्यान दें, जिसके परिणामस्वरूप अदालत

का मूल्यवान समय बर्बाद हो गया, भारत सरकार को एक समिति का गठन करने का निर्देश दिया, जिसमें उद्योग और वाणिज्य मंत्रालय, सार्वजनिक उद्यम ब्यूरो और कानून मंत्रालय के प्रतिनिधि शामिल हों, जो सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रमों के विवादों की निगरानी करें और सरकार के साथ यह सुनिश्चित करें कि कोई भी मुकदमा अदालतों और न्यायालयों में न आए, जब तक कि मुकदमेबाजी के लिए मंजूरी देने या अस्वीकार करने के लिए समिति द्वारा पहले मामले की जांच नहीं की गई हो। इस न्यायालय ने प्रत्येक न्यायालय और प्रत्येक न्यायाधिकरण के लिए, जहां इस तरह का विवाद उठाया जाता है, यह अनिवार्य कर दिया कि यदि ऐसा अनुरोध नहीं किया गया है तो समिति से मंजूरी की मांग की जाए और यह भी निर्देश दिया कि इस तरह की मंजूरी की अनुपस्थिति में में कार्यवाही को आगे नहीं बढ़ाया जाएगा।यह उक्त निर्देशों के अनुसार था कि कैबिनेट सचिव की अध्यक्षता में भारत सरकार द्वारा 31 दिसंबर, 1991 को कैबिनेट सचिवालय ओ. एम. सं.53/3/6/91-कैबिनेट के संदर्भ में एक विवाद समिति का गठन किया गया था।

16, समिति की स्थापना के एक दशक से भी अधिक समय बाद ओ. आई. में इस न्यायालय का उल्लेख किया गया था!और प्राकृतिक गैस आयोग बनाम केंद्रीय उत्पाद शुल्क के कलेक्टर, (2004) 6 एस. सी. सी. 437 ने पिछले आदेश को यह कहते हुए स्पष्ट किया कि समिति से मंजूरी की अनुपस्थिति में में, अदालतें मामले में आगे नहीं बढ़ेंगी, लेकिन सीमा को बचाने के लिए सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रम द्वारा एक मुकदमा दायर किया जा सकता है। इस न्यायालय ने टिप्पणी कीः

> "4. इन व्यवस्थाओं को लागू करने में कुछ संदेह और समस्याएं उत्पन्न हुई हैं जिन्हें स्पष्ट करने और कुछ को दूर करने की आवश्यकता है। इन शब्दों के सटीक महत्व और निहितार्थ के बारे में कुछ संदेह बने हुए हैं और "मुकदमेबाजी का सहारा लेने से बचना

चाहिए" यह स्पष्ट है कि इस अदालत का आदेश-यह प्रभाव डालने के लिए नहीं है-न ही ऐसा किया जा सकता है-जहां तक भारत संघ और उसके सांविधिक निगमों का संबंध है, वैधानिक उपचार समाप्त हो गए हैं, वास्तव में, उच्च शक्ति समिति के गठन का उद्देश्य उन उपायों को दूर करना नहीं था।

XXX

5. तदनुसार, भारत संघ या सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रमों द्वारा किसी भी न्यायालय या न्यायाधिकरण के समक्ष अपील या याचिका दायर करने पर कोई रोक नहीं होनी चाहिए ताकि सीमा को बचाया जा सके। लेकिन, इस तरह की फाइलिंग से पहले उच्च शक्ति समिति से मंजूरी लेने का हर प्रयास किया जाना चाहिए।

XXX

6. जहाँ कहीं भी उच्च शक्ति समिति की मंजूरी के बिना अपील, याचिकाएँ आदि दायर की जाती हैं, ताकि सीमा को बचाया जा सके, अपीलकर्ता या याचिकाकर्ता, जैसा भी मामला हो, ऐसी फाइलिंग से एक महीने के भीतर, मामले को उच्च शक्ति समिति को पूर्व सूचना के साथ भारत सरकार के मंत्रिमंडल सचिवालय में नामित प्राधिकरण को भेज देगा, जो उस ओर से नोटिस प्राप्त करने के लिए अधिकृत है। श्री. विद्वान अतिरिक्त सॉलिसिटर जनरल के. टी. एस. तुलसी ने कहा कि उच्च शक्ति समिति के इन संदर्भों के समन्वय के लिए सरकार ने इन संदर्भों के समन्वय के लिए नोडल प्राधिआदेशण के रूप में कैबिनेट सचिवालय में अवर सचिव (समन्वय) को नामित आदेशने का प्रस्ताव

किया है। संदर्भ को बनाया गया माना जाएगा और उक्त नोडल प्राधिकरण के पास संदर्भ की सूचना दर्ज होने के बाद ही प्रभावी होगा। इस निर्देश को वैध माना जाएगा यदि भारत संघ के मामले में इसके सचिव, वित्त मंत्रालय के राजस्व विभाग द्वारा और सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रमों के मामले में इसके अध्यक्ष, प्रबंध निदेशक या मुख्य कार्यकारी द्वारा किया जाता है। यह उच्च शक्ति समिति को इस तरह के संदर्भ के संकेत दिए गए तरीके से किए जाने के बाद ही है कि आदेश या चुनौती के तहत कार्यवाही का संचालन तब तक निलंबित किया जाएगा जब तक कि उच्च शक्ति समिति विवाद का समाधान नहीं करती या मुकदमेबाजी को मंजूरी नहीं देती।यदि उच्च शक्ति समिति अपने द्वारा दर्ज किए जाने वाले कारणों से मामले को हल करने में असमर्थ है, तो वह ए मुकदमे के लिए मंजूरी प्रदान करेगी।"

(जोर दिया गया)

17. तेल और प्राकृतिक गैस निगम लिमिटेड बनामशहर और उद्योग देव कॉर्प., महाराष्ट्र और अन्य (2007) 7 एस. सी. सी. 39 इस न्यायालय ने केंद्र सरकार और राज्य सरकार की संस्थाओं के बीच विवादों को देखने के लिए एक और समिति के गठन का आदेश दिया।इसके बाद आयकर आयुक्त, डेल्टी-वी1आई बनाम ओरिएंटल इंश्योरेंस कंपनी लिड आए। (2008) 9 एस. सी. सी. 349 जिसमें इस न्यायालय ने तेल और प्राकृतिक गैस आयोग बनाम केंद्रीय उत्पाद शुल्क कलेक्टर, (2004) 6 एस. सी. सी. 437 में अपने पहले के आदेश को स्पष्ट करते हुए कहा कि न्यायालय द्वारा निर्धारित कोई कठोर समय सीमा नहीं थी और केवल इसलिए कि समिति से संपर्क करने में कुछ देरी हुई थी, इसका मतलब यह नहीं था कि कार्रवाई अवैध थी।

इस संबंध में निम्नलिखित अंश उपयुक्त हैः

"10. इस बात पर जोर देने की आवश्यकता है कि इस न्यायालय द्वारा वास्तव में कोई कठोर समय सीमा का संकेत नहीं दिया गया था, एक महीने के समय पर जोर देने की आवश्यकता थी, केवल इसलिए कि समिति से संपर्क करने में कुछ देरी हुई है जो कार्रवाई को अवैध नहीं बनाती है। समिति से इस मामले को तेजी से निपटाने की आवश्यकता है ताकि अपीलों का कोई अनावश्यक कार्य संचय न हो जिसे अंततः आगे नहीं बढ़ाया जा सके। उस अर्थ में, यह आवश्यक है कि संबंधित अधिकारी तत्काल कार्रवाई करें अन्यथा इच्छित उद्देश्य विफल हो जाएगा। सुस्ती की कोई गुंजाइश नहीं है। न्यायालय द्वारा यह परीक्षण किया जाना है कि क्या कोई उदासीनता और सुस्ती थी और उचित मामलों में हस्तक्षेप करने से इनकार कर दिया गया था। इन मामलों में तथ्यात्मक स्थिति ऐसी नहीं है। इसलिए, हम प्रत्येक मामले में उच्च न्यायालय के आदेश को दरकिनार करते हैं और संबंधित समिति से रिपोर्ट प्राप्त होने पर मामले में आगे बढ़ने के लिए वांछनीयता के प्रश्न पर सीधे विचार करते हैं।

एक्सएक्सएक्स

12. यह ध्यान दिया जाना चाहिए कि जहां समिति द्वारा अनुमति दी गई है, वहां न्यायालय पर मामले की जांच करने और गुण-दोष पर निर्णय लेने में कोई बाधा नहीं है, लेकिन जहां ऊपर उल्लिखित कोई विलंबित दृष्टिकोण नहीं है, वहां मामला तय करने के लिए न्यायालय को यह तय करना है कि क्या अस्पष्टीकृत देरी और सुस्त कार्रवाई के

कारण वह मामलों पर विचार करने से इनकार कर देगा। यह प्रत्येक मामले में तथ्यात्मक परिदृश्य पर निर्भर करेगा, और कोई सीधा जैकेट सूत्र नहीं अपनाया जा सकता है।" (जोर दिया गया)

18. केंद्रीय उत्पाद शुल्क आयुक्त बनाम भारत पेट्रोलियम निगम लिमिटेड (2010) 13 एस. सी. सी. 42, इस न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि 'सी. ओ. डी. का कार्य विफल हो गया था क्योंकि सी. ओ. डी. द्वारा कई कठिनाइयों का अनुभव किया गया था जो 9 मार्च, 2010 को कैबिनेट सचिव के पत्र में व्यक्त किए गए थे। इस न्यायालय ने टिप्पणी की

"4. हमारे अनुभव में, सीओडी का काम विफल रहा है। सी. ओ. डी. द्वारा कई कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है जो 9 मार्च, 2010 को कैबिनेट सचिव के पत्र में व्यक्त की गई हैं। उक्त पत्र के अलावा, हम सार्वजनिक क्षेत्र की कंपनियों से संबंधित कई मामलों में पाते हैं कि सीओडी द्वारा अलग-अलग विचार व्यक्त किए जाते हैं, जिसके परिणामस्वरूप न केवल मामले दायर करने में देरी होती है, बल्कि आगे की मुकदमेबाजी भी होती है। इन परिस्थितियों में, हम विद्वान महान्यायवादी द्वारा हमारे समक्ष प्रस्तुत किए गए निवेदन में योग्यता पाते हैं कि यदि तेल और प्राकृतिक गैस आयोग बनाम केंद्रीय उत्पाद शुल्क कलेक्टर का मामला है तो इस न्यायालय की तीन महान्यायवादी द्वारा पारित आदेशों पर पुनर्विचार करने का समय आ गया है"

19. तदनुसार मामला सीओडी के गठन का निर्देश देने वाले पहले के फैसलों पर पुनर्विचार करने के लिए एक बड़ी पीठ को भेजा गया था। इस मामले की सुनवाई

अंततः इस न्यायालय की पांच न्यायाधीशों की पीठ द्वारा इलेक्ट्रॉनिक्स कॉर्पोरेशन ऑफ इंडिया लिमिटेड बनाम इलेक्ट्रॉनिक्स कॉर्पोरेशन ऑफ इंडिया लिमिटेड भारत संघ, (2011) 3 एस. सी. सी. 404 में की गई। इस न्यायालय ने विवाद समिति के कामकाज में विभिन्न खामियों को ध्यान में रखते हुए निम्नलिखित शब्दों में पारित अपने पिछले आदेशों को वापस लेने का आदेश दियाः

> "6.....1992 में रिपोर्ट किए गए 11.9.1991 के आदेश द्वारा सप्लीमेंट (2) एस. सी. सी. 432 (ओ. एन. जी. सी. और ए. एन. आर. बनाम.सी. सी. ई.), इस न्यायालय ने कहा कि "केंद्र सरकार और भारत संघ के सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रमों को अदालत में अपनी मुकदमेबाजी नहीं लड़नी चाहिए।"नतीजतन, भारत सरकार के कैबिनेट सचिव को"मामले को व्यक्तिगत रूप से संभालने के लिए बुलाया गया था।
>
> 7, इसके बाद ओ. एन. जी. सी.-II मामले (उपरोक्त) में दिनांक 1 का आदेश आया, जिसमें इस न्यायालय ने भारत सरकार को "उद्योग मंत्रालय, सार्वजनिक उद्यम ब्यूरो और कानून मंत्रालय के प्रतिनिधियों से मिलकर एक समिति गठित करने का निर्देश दिया, जो मंत्रालय और भारत सरकार के मंत्रालय, मंत्रालय और भारत सरकार के सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रमों और सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रमों के बीच विवादों की निगरानी करे, ताकि यह सुनिश्चित किया जा सके कि कोई भी मुकदमा अदालत या न्यायाधिकरण में समिति द्वारा पहले मामले की जांच किए बिना और मुकदमेबाजी के लिए इसकी मंजूरी के बिना न आए।"

8. इसके बाद, ओ. एन. जी. सी.-आई. आई. टी. मामले (उपरोक्त) में, इस न्यायालय ने निर्देश दिया कि "सचिवों की समिति" (सी. ओ. एस.) से मंजूरी की अनुपस्थिति में में, किसी भी कानूनी कार्यवाही के साथ आगे नहीं बढ़ाया जाएगा।यह शर्त के अधीन था कि इस तरह की मंजूरी के बिना दायर अपील और याचिकाएं सीमा को बचाने के लिए दायर की जा सकती हैं।हालाँकि, यह निर्देश दिया गया था कि इस तरह की फाइलिंग से एक महीने के भीतर आवश्यक कार्य किया जाना चाहिए, जिसमें विफल रहने पर मामले को आगे नहीं बढ़ाया जाएगा। (ओ. एन. जी. सी.-चौथा मामला) दिनांकित एक अन्य आदेश द्वारा इस न्यायालय ने राज्य सरकारों से जुड़े विवादों और उनकी साधनता को सौहार्दपूर्ण ढंग से हल करने के लिए उच्चाधिकार प्राप्त समिति द्वारा विवाद समाधान की अवधारणा का विस्तार किया।

9. इस समिति की स्थापना के पीछे का विचार, शुरू में, एक "उच्चाधिकार प्राप्त समिति" (एच. पी. सी.) कहा जाता था, जिसे बाद में "सचिवों की समिति" (सी. ओ. एस.) कहा गया और अंत में इसे "विवादों पर समिति" कहा गया।" (सी. ओ. डी.) यह सुनिश्चित करने के लिए था कि राज्य के संसाधनों को राज्य की संस्थाओं के बीच अंतर-मुकदमेबाजी में नष्ट नहीं किया जाता है, जिसका सबसे अच्छा समाधान एक सशक्त सी. ओ. डी. द्वारा किया जा सकता है। विचार किया गया तंत्र केवल यह सुनिश्चित करने के लिए था कि कोई भी मुकदमा अदालत में तब तक न आए जब तक कि पक्षकारों को एक आंतरिक समिति के समक्ष सुलह का अवसर न मिले। [देखें दिनांक 7.1.1994 (ऊपर)] के आदेश के पैरा 3 में कहा गया है कि वन-

निर्मित आदेशों के पीछे का सिद्धांत और उद्देश्य असाधारण और प्रशंसनीय है, अनुभव से पता चला है कि सी. ओ. डी. के सर्वोत्तम प्रयासों के बावजूद, तंत्र ने उन परिणामों को प्राप्त नहीं किया है जिनके लिए इसे गठित किया गया था और वास्तव में मुकदमेबाजी में देरी हुई है। हम ऊपर दो उदाहरण पहले ही दे चुके हैं। वे इंगित करते हैं कि तथ्यों के एक ही समूह पर, एक मामले में मंजूरी दी जाती है और दूसरे में अस्वीकार कर दिया जाता है। इसके कारण एक सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रम ने भेदभाव के आधार पर इस न्यायालय में एसएलपी की स्थापना की है। हमें इस तरह के चित्रों को गुणा करने की आवश्यकता नहीं है। तंत्र को एक प्रशंसनीय वस्तु के साथ स्थापित किया गया था। हालांकि इस तंत्र के कारण दीवानी अपील दायर करने में देरी हुई है जिससे नुकसान हुआ है। उदाहरण के लिए, छूट के कई मामलों में उद्योग विभाग छूट देता है, जबकि राजस्व विभाग इसे देने से इनकार करता है। इसी तरह, कई मामलों में नियामक कानूनों के अधिनियमन के साथ, मान लीजिए, एस. ई. बी. आई. और बीमा नियामकों के बीच अधिकार क्षेत्र का अतिव्यापी हो सकता है। दीवानी अपीलें इस न्यायालय में होती हैं। ऐसे मामलों में दांव बहुत बड़े होते हैं। संभवतः सीओडी द्वारा समय पर मंजूरी की उम्मीद नहीं की जा सकती है। ऐसे मामलों में, एक को मंजूरी देने का परिणाम हो सकता है न कि दूसरे को अधिक और अधिक मुकदमेबाजी की पीढ़ी में तंत्र ने अपनी उपयोगिता को समाप्त कर दिया है।' ऊपर बताए गए बदले हुए परिदृश्य में, हमारा विचार है कि उपरोक्त परिस्थितियों में इस न्यायालय के 1995 के अपने विभिन्न आदेशों में दिए गए निर्देशों को

याद करने का समय आ गया है, जिनके बारे में 1995 के उपबंध (4) एस. सी. सी. 541 दिनांक 11.10.1991 में बताया गया है।ii) (2004) 6 एस. सी. सी. 437 दिनांक 7.1.1994 और (iii) (2007) 7 एस. सी. सी. 39 दिनांक 20.7,।2007.

10. इन परिस्थितियों में, हम निम्नलिखित आदेशों में सूचित किया गयाः

(i) 1995 सप्लीमेंट (4) एस. सी. सी. 541 दिनांक 11.10.1991

(ii) (2004) 6 एससीसी 437 दिनांक 7.1,1994

(iii) (2007) 7 एससीसी 39 दिनांक 20.7.2007 "

(जोर दिया गया)

20. इस बीच की अवधि में भारत सरकार ने वाणिज्यिक विवादों के निपटारे के लिए मध्यस्थता की स्थायी मशीनरी और सार्वजनिक उद्यम विआदेश द्वारा जारी एक परिपत्र के संदर्भ में विवादों पर समिति के गठन के संबंध में इस न्यायालय द्वारा जारी किए गए निर्देशों को दिशानिर्देशों के एक समूह में समेकित किया था। डी. पी. ई. ओ. एम. सं.DPE/4 (10)/2001-पी. एम. ए.-जी. एल.-I दिनांक 22 जनवरी, 2004, जिसमें अन्य बातों के साथ साथ साथ-साथ मध्यस्थों की स्थायी मशीनरी (पी. एम. ए.) के निर्माण का प्रावधान किया गया था, ने ऐसी मशीनरी के निर्माण की आवश्यकता बताई, विआदेशों/पी. एस. ई., सी. पी. एस. सी., बैंकों आदि को उक्त मशीनरी का सहारा लेने की पात्रता, निश्चित मौद्रिक सीमा, मध्यस्थता के लिए देय निर्धारित शुल्क, निर्णय के खिलाफ अपील के लिए प्रावधान और विवाद समिति से मंजूरी के लिए भी प्रावधान किया।पी. एस. ई. एस., सी. पी. एस. ई., बैंकों आदि को जारी किए गए निर्देशों में वर्तमान और भविष्य के अनुबंधों/समझौतों में एक खंड को

शामिल करने का निर्देश दिया गया है, जिसमें विशेष रूप से मध्यस्थता की स्थायी मशीनरी के तहत आयोजित मध्यस्थता के लिए मध्यस्थता और सुलह अधिनियम, 1996 के आवेदन को शामिल नहीं किया गया है।वर्तमान और भविष्य के अनुबंधों/समझौते में शामिल करने के लिए अनुशंसित मध्यस्थता खंड निम्नलिखित शब्दों में होना थाः

> "अनुबंधों के प्रावधानों की व्याख्या और उन्हें लागू करने से संबंधित किसी भी विवाद या मतभेद की स्थिति में, ऐसे विवाद या मतभेद को किसी भी पक्ष द्वारा सार्वजनिक उद्यम विभाग में एकमात्र मध्यस्थ को मध्यस्थता के लिए भेजा जाएगा, जिसे सार्वजनिक उद्यम विभाग के प्रभारी भारत सरकार के सचिव द्वारा नामित किया जाएगा। मध्यस्थता और सुलह अधिनियम, 1996 इस खंड के तहत मध्यस्थता पर लागू नहीं होगा।मध्यस्थ का अधिनिर्णय विवाद के पक्षकारों के लिए बाध्यकारी होगा, बशर्ते कि इस प्रकार के अधिनिर्णय से व्यथित कोई भी पक्ष विधि सचिव, विधि कार्य विभाग, विधि और न्यायाधीश मंत्रालय, भारत सरकार को अधिनिर्णय को अलग करने या संशोधित करने के लिए आगे निर्देश दे सकता है। इस तरह के संदर्भ पर विवाद का निर्णय कानून सचिव या विशेष सचिव/अतिरिक्त सचिव द्वारा किया जाएगा, जब कानून सचिव द्वारा अधिकृत किया जाएगा, जिसका निर्णय पार्टियों को अंततः और निर्णायक रूप से बाध्य करेगा। विवाद के पक्ष मध्यस्थ द्वारा सूचित मध्यस्थता की लागत को समान रूप से साझा करेंगे ":(जोर दिया गया)

21. भारत सरकार, उद्योग और सार्वजनिक उद्यम मंत्रालय, सार्वजनिक उद्यम विभाग द्वारा जारी 12 जून, 2013 के कार्यालय ज्ञापन का भी संदर्भ दिया जा सकता है,

जिसमें दिशानिर्देशों को आगे संशोधित किया गया है और पहले के दिशानिर्देश पैरा 13 से हटा दिया गया है, जिसके लिए विवाद समिति से मंजूरी की आवश्यकता थी।

22. उपरोक्त के शुद्ध प्रभाव को संक्षेप में निम्नानुसार प्रस्तुत किया जा सकता हैः

(i) 11 अक्टूबर, 1991 को ओ. एन. जी. सी. आई. टी. पर निर्णय लेने से पहले ही मार्च, 1989 में मध्यस्थता की स्थायी मशीनरी स्थापित की गई थी।

(ii) मध्यस्थता की स्थायी मशीनरी उस समय इस देश में मध्यस्थता अधिनियम, 1940 (1940 का 10) को विनियमित करने वाले वैधानिक प्रावधान से बाहर थी।

(iii) मध्यस्थता अधिनियम, 1940 के प्रावधानों के बाहर होने के संदर्भ में दिया गया निर्णय उक्त अधिनियम के तहत एक पुरस्कार का गठन नहीं करेगा और इसलिए न तो उक्त क़ानून के तहत अलग किया जा सकता है और न ही निर्णय देनदार के खिलाफ अधिनियमी रूप से पारित डिक्री के रूप में लागू करने योग्य होने के लिए अदालत का नियम बनाया जा सकता है।

(iv) ओ. एन. जी. सी. मामलों में पारित आदेशों की श्रृंखला में इस न्यायालय के आदेशों के तहत गठित विमुकदमों पर समिति ने एक पी. एस. ई./पी. एस. यू. द्वारा दूसरे के खिलाफ या एक सरकार द्वारा मुकदमा या कार्यवाही दायर करने से नहीं रोका।

दूसरे के खिलाफ विभाग एकमात्र प्रतिबंध यह था कि जब इस तरह का मुकदमा या कार्यवाही शुरू की गई थी तब भी उस पर तब तक कार्रवाई नहीं की जाएगी जब तक कि विमुकदमा समिति पक्ष को अनुमति नहीं दे देती।

अदालत का रुख करें।

(v) ऐसी अनुमति प्राप्त करने के लिए निर्धारित समय सीमा भी केवल निर्देशिका थी और यदि निर्धारित अवधि के भीतर अनुमति प्रस्तुत नहीं की गई थी तो यह मुकदमा और/या कार्यवाही को अवैध नहीं बनाती थी।

(vi) विवाद समिति को कार्यवाहियों को स्थापित करने या आगे बढ़ाने के लिए अनुमति देने की आवश्यकता थी। यदि उच्च शक्ति समिति (सी. ओ. डी.) अपने द्वारा दर्ज किए जाने वाले कारणों के कारण विवाद को हल करने में असमर्थ थी, तो मुकदमेबाजी के लिए मंजूरी देने की आवश्यकता थी।

(vii) विवाद समिति का अनुभव असंतोषजनक पाया गया और न्यायालय द्वारा उसके गठन और उसके प्रासंगिक मामलों के संबंध में जारी किए गए निर्देशों को इस न्यायालय की संविधान पीठ द्वारा वापस ले लिया गया, जिससे उस बाधा को दूर किया गया जो न्यायालय/न्यायाधिकरण की शक्तियों पर मुकदमा/कानूनी कार्यवाही के साथ आगे बढ़ने के लिए रखी गई थी। सार्वजनिक उद्यम विभाग ने ओ. एन. जी. सी. लाइन ऑफ केस में आदेशों को वापस लेने के बाद अपने दिशानिर्देशों में संशोधन किया है।

मध्यस्थता की स्थायी मशीनरी का सहारा लेने के लिए सी. ओ. डी. मंजूरी की आवश्यकताएँ और

(viii) मध्यस्थता की स्थायी मशीनरी मध्यस्थता अधिनियम, 1940 के दायरे से बाहर थी और अभी भी है, जिसे अब मध्यस्थता और सुलह अधिनियम, 1996 द्वारा प्रतिस्थापित किया गया है।

23. आइए अब हम उपरोक्त प्रस्तावों के आलोक में मामले को देखें। यह सच है कि अपीलकर्ता और प्रतिवादी के बीच विवादों को वर्ष 1993/1994 में मध्यस्थता के

लिए स्थायी तंत्र के संदर्भ में निपटान के लिए भेजा गया था। यह भी विवाद में नहीं है कि उक्त संदर्भ की तारीख तक विवाद समिति का गठन पहले ही किया जा चुका था, लेकिन संदर्भ के लिए कोई अनुमति नहीं ली गई थी। यह भी स्वीकार किया जाता है कि मध्यस्थ ने मध्यस्थता की स्थायी मशीनरी के तहत एक निर्णय दिया था, जिस पर कानून सचिव के समक्ष अपील में सवाल उठाया गया था, जिन्होंने उसमें कुछ बदलाव किए थे। यह भी सामान्य आधार है कि इस प्रकार दिए गए पुरस्कार को अपीलार्थियों द्वारा स्वीकार नहीं किया गया है क्योंकि अपीलकर्ता ने सिविल मुकदमा सं.1709/2000 में एक मध्यस्थता पुरस्कार को चुनौती देते हुए एक मुकदमा दायर किया है जिसमें अपीलकर्ता ने एक घोषणा का दावा किया है कि अनुबंधों को खंड 3 के भंग के कारण अमान्य कर दिया गया था।अपीलकर्ता ने यह घोषणा करने की भी मांग की कि प्रत्यर्थी कंपनी उक्त अनुबंध के तहत किसी भी राहत का दावा करने की हकदार नहीं थी और न ही प्रत्यर्थी संख्या 2 ऐसा करने का हकदार था और तथाकथित मध्यस्थता पुरस्कार को रिकॉर्ड के सामने दूषित कर दिया गया था, इसलिए इसे रद्द किया जा सकता है। यह कि इस तरह का मुकदमा दायर किया जा सकता है, लेकिन उस समय तक आगे नहीं बढ़ाया जा सकता है जब तक कि सी. ओ. डी. ने अनुमति नहीं दी है, यह भी विमुकदमा से परे है क्योंकि मुकदमा शुरू होने की तारीख पर ओ. एन. जी. सी. मामलों के समूह में इस न्यायालय का निर्देश अभी भी क्षेत्र में था। ऐसी अनुमति 30 दिनों के भीतर प्राप्त की जा सकती थी जो पवित्र नहीं थी, लेकिन मुकदमे की संस्था को स्वयं दोष नहीं दिया जा सकता था क्योंकि एक वादकारी इस न्यायालय के निर्देश के संदर्भ में था जो बचाव के लिए कार्यवाही शुरू करने का हकदार था। उच्च न्यायालय ने, फिर भी, इस पर शिकायत को खारिज कर दिया है इस आधार पर कि सीओडी से अनुमति प्राप्त नहीं की गई थी। ऐसा करते हुए उच्च न्यायालय ने स्पष्ट रूप से इस न्यायालय के निर्देश का अर्थ समझ लिया जैसे कि इस तरह की अनुमति की अनुपस्थिति में एक

घातक दोष था जो वह नहीं था। इस न्यायालय के आदेश जिन पर हमने पहले एक संदर्भ दिया है, स्पष्ट रूप से यह स्पष्ट करते हैं कि मुकदमा दायर करना अपने आप में वर्जित नहीं था। सी. ओ. डी. से अनुमति प्राप्त होने तक मुकदमा में आगे की प्रगति को रोक दिया गया था। जहाँ तक उच्च न्यायालय ने सी. ओ. डी. से अनुमति की अनुपस्थिति में को मुकदमे की स्थापना के लिए एक अनिवार्य कानूनी आवश्यकता मुकदमा, उसने एक गलती की। इस अदालत के फैसले में ऐसी कोई कानूनी आवश्यकता नहीं पढ़ी जा सकती है और न ही हमारे सामने पेश हुए विद्वान सॉलिसिटर जनरल श्री रंजीत कुमार ने ऐसी किसी आवश्यकता की ओर इशारा किया है।

24. तब सवाल यह है कि क्या इस स्तर पर भी सीओडी की मंजूरी की आवश्यकता पर जोर दिया जा सकता है।हमारा जवाब नकारात्मक है। हम ऐसा इसलिए कहते हैं क्योंकि सीओडी को निरस्त/भंग कर दिया गया है और ऐसी समिति के गठन का निर्देश देने वाले आदेशों को उलट दिया गया है। चूंकि वर्तमान में कोई सी. ओ. डी. नहीं है, इसलिए उसी से किसी भी मंजूरी को प्राप्त करने या उस पर जोर देने का कोई सवाल ही नहीं है। उपरोक्त चर्चा का परिणाम यह है कि उच्च न्यायालय द्वारा वाद को इस आधार पर खारिज करने के लिए पारित आदेश कि वह पूर्व में या सी. ओ. डी. से अनुमति के साथ नहीं था, अस्थिर हैं, इसलिए उन्हें रद्द किया जा सकता है।

25. यह हमें इस प्रश्न पर लाता है कि क्या हमें मामले को न्यायिक निर्णय के लिए सिविल न्यायालय को वापस भेजना चाहिए और यदि यह कार्रवाई का एक वांछनीय तरीका नहीं था तो क्या मध्यस्थता के माध्यम से विवादित मामलों का निर्णय एक बेहतर विकल्प होगा।श्री रंजीत कुमार, विद्वान सॉलिसिटर जनरल द्वारा यह तर्क दिया गया था कि प्रतिवादी के पास मध्यस्थता की स्थायी मशीनरी के संदर्भ में उसके पक्ष में एक निर्णय है और जब तक वह निर्णय है, तब तक उक्त तंत्र के तहत पहले से ही निर्णय लिए गए दावों पर किसी नए या आगे मध्यस्थता की कोई आवश्यकता नहीं

है। यह तर्क पहली नज़र में आकर्षक प्रतीत होता है लेकिन एक करीबी जांच से बच नहीं पाता है। ऐसा इसलिए है क्योंकि मध्यस्थता की स्थायी मशीनरी के तहत एक मध्यस्थता पुरस्कार विवाद को शांत कर सकता है यदि विवाद के पक्षों द्वारा इसे स्वीकार किया जाता है। हालाँकि, मामलों में, एक पक्ष पुरस्कार प्रतिग्रहण करना नहीं करता है, जैसा कि स्थिति है हाथ में मामला, मध्यस्थता पुरस्कार विवाद को समाप्त नहीं कर सकता है। इस तरह का निर्णय मध्यस्थता को नियंत्रित करने वाले कानून के ढांचे के बाहर होने के कारण कानून की अदालत में कानूनी रूप से लागू नहीं होगा। श्री रंजीत कुमार, विद्वान अतिरिक्त सॉलिसिटर जनरल के प्रति निष्पक्षता में, हमें यह उल्लेख करना चाहिए कि उन्होंने इस बात पर विवाद नहीं किया कि मध्यस्थ द्वारा मध्यस्थता की स्थायी मशीनरी के तहत दिया गया निर्णय इस देश में मध्यस्थता को विनियमित करने वाले क़ानून के बाहर था और इसलिए, अधिनियम में निष्पादन योग्य नहीं था। उन्होंने तर्क दिया कि चूंकि विवादों के दोनों पक्ष सरकारी निगम थे, इसलिए सरकार प्रत्यर्थी को देय राशि की वसूली के लिए प्रशासनिक तंत्र अपना सकती है। हमारी राय में, यह सवाल का जवाब नहीं है। प्रशासनिक पक्ष से सरकार के लिए उपलब्ध उपचार उन उपचारों का स्थान नहीं ले सकते हैं जो देश के कानून के अनुसार हारने वाले पक्ष के लिए उपलब्ध हैं। अपीलकर्ता मध्यस्थता की स्थायी मशीनरी के संदर्भ में मध्यस्थों के समक्ष हार गया है और कई आधारों पर अपने दायित्व पर कड़ा विवाद कर रहा है। इसलिए अनुबंध के तहत अपीलकर्ता के दायित्व के बारे में विवाद तब तक बढ़ता रहता है जब तक कि इसे कानून के अनुसार अंततः और प्रभावी रूप से हल नहीं किया जाता है। कानून द्वारा मान्यता प्राप्त ऐसा कोई प्रभावी निर्णय अब तक नहीं हुआ है।ऐसा होने पर, इस तरह के निर्णय की मांग करने के अपीलकर्ता के अधिकार को केवल इसलिए अस्वीकार नहीं किया जा सकता है क्योंकि यह एक सरकारी स्वामित्व वाली कंपनी है, भले ही अपीलकर्ता एक सरकारी कंपनी हो, लेकिन सरकार से

अलग एक इकाई के रूप में इसका कानूनी चरित्र है। सिर्फ इसलिए कि उसने स्थायी प्रक्रिया का सहारा लिया था या कार्यवाही में भाग लिया था, कानून के अनुसार निवारण की मांग के खिलाफ कोई रोक नहीं हो सकती है।ठीक यही उसने किया जब उसने घोषणा के लिए एक मुकदमा दायर किया कि पुरस्कार विभिन्न कारणों से खराब था और यह भी कि प्रतिवादी द्वारा किए गए भंग के कारण अनुबंध रद्द कर दिया गया था।

26. यह कहने के बाद, श्री पटवालिया ने निर्देशों के बाद एक स्पष्ट बयान दिया कि अपीलकर्ता को अपीलकर्ता और प्रत्यर्थी के सभी दावों और प्रतिवादों को प्राप्त करने में कोई कठिनाई नहीं होगी - निगम एक एकल के लिए कानून के अनुसार निर्णय के लिए संदर्भित इस न्यायालय द्वारा नामित मध्यस्थ इस तरह के संदर्भ को सुविधाजनक बनाने के लिए मि.पटवालिया ने निर्देश पर प्रतिवादी की श्रृंखला से प्रतिवादी संख्या 2 को हटाने की मांग की है, जिसे हम अस्वीकार करने का कोई कारण नहीं देखते हैं, विशेष रूप से क्योंकि विवाद दो निगमों के बीच है जो केवल कानून के अनुसार निर्णय के लिए संदर्भित किया जाना चाहिए। प्रत्यर्थी संख्या 2 तदनुसार पक्षों की श्रृंखला से हटा दिया जाएगा।

27, हालाँकि, कुमार यह रियायत देने में कुछ उलझन में थे कि दावे को मध्यस्थता और सुलह अधिनियम, 1996 के प्रावधानों के अनुसार मध्यस्थता के एक नए दौर के लिए भेजा जा सकता है। यह मतभेद हमें दोनों निगमों के बीच सभी बकाया विमुकदमों के निर्णय के लिए एकमात्र मध्यस्थ को संदर्भित करने का एक उपयुक्त आदेश देने से नहीं रोकता है, विशेष रूप से इसलिए कि इस तरह के मध्यस्थता का विकल्प अपीलकर्ता द्वारा दीवानी अदालत के समक्ष दायर मुकदमे का एक लंबा खर्चीला और बोझिल परीक्षण है और एक गैर-सांविधिक प्रशासनिक तंत्र के तहत किए गए पुरस्कार के निष्पादन को घेरने वाली कठिनाइयाँ हैं। ये दोनों पाठ्यक्रम अनाकर्षक हैं और लगभग बीस वर्षों तक एक-दूसरे से लड़ने के बाद भी जल्दी सफल होने की कोई

संभावना नहीं है।

28. परिणामस्वरूप हम इस अपील को स्वीकार करते हैं और उच्च न्यायालय द्वारा पारित निर्णय और आदेश को रद्द कर देते हैं। हम आगे निर्देश देते हैं कि अपीलकर्ता कंपनी और प्रत्यर्थी निगम के बीच निष्पादित अनुबंधों से संबंधित और उनसे उत्पन्न होने वाले सभी विवाद के लिए निर्दिष्ट किया जाएगा। इस न्यायालय के पूर्व मुख्य न्यायाधीश, माननीय न्यायाधीश को निर्णय, जिन्हें एतद्द्वारा सभी दावों और जवाबी दावों पर निर्णय लेने के लिए एकमात्र मध्यस्थ के रूप में नियुक्त किया गया है, जो पक्षकार कर सकते हैंःउसके सामने फाइल करना चुनें। सिविल मुकदमा (ओएस) संख्या 1709/2000 का भी इस आदेश के संदर्भ में निपटारा किया जाएगा।पक्ष आगे के निर्देशों के लिए 22 अगस्त, 2016 को मध्यस्थ के समक्ष उपस्थित होंगे। मध्यस्थ अपना शुल्क स्वयं निर्धारित करने के लिए स्वतंत्र होगा। कोई लागत नहीं।

देविका गुजराल अपील को मंजूरी दी गई।

यह अनुवाद आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस टूल '**सुवास**' की सहायता से अनुवादक द्वारा किया गया है।

अस्वीकरण : यह निर्णय पक्षकार को उसकी भाषा में समझाने के सीमित उपयोग के लिए स्थानीय भाषा में अनुवादित किया गया है और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और आधिकारिक उद्देश्यों के लिए, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रामाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य से भी अंग्रेजी संस्करण ही मान्य होगा।